[2019] 2 उम. नि. प. 233

उत्तर-पूर्व कर्नाटक सड़क परिवहन निगम

बनाम

सुजाता (श्रीमती)

2 नवम्बर, 2018

न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे और न्यायमूर्ति (सुश्री) इन्दु मल्होत्रा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 133 [सपठित कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 30 और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96] – अपील – दुर्घटना में कारित क्षतियां कारित होना – क्षतियों के लिए प्रतिकर रकम का दावा करना – प्रतिकर रकम का अवधारण होना – अवधारित प्रतिकर रकम पर देय ब्याज प्रारंभ होने की तारीख विवादित होना – यदि किसी व्यक्ति की दुर्घटना में क्षतियां कारित हो जाती हैं और उसके द्वारा प्रतिकर के लिए दावा किया जाता है और दावा करने पर प्रतिकर रकम अवधारित कर दी जाती है तो अवधारित प्रतिकर पर देय ब्याज, दुर्घटना की तारीख से प्रारंभ होता न कि दावा करने की तारीख से प्रारंभ होता है ।

वर्तमान मामले में, मल्लिकार्जुन, कर्नाटक राज्य के लिए अपीलार्थी-राज्य सड़क परिवहन निगम का एक कर्मचारी था जो चालक के रूप में कार्य कर रहा था । उसकी मृत्यु उस समय हुई जब वह तारीख 6 अप्रैल, 1999 को ड्यूटी पर था, जब उसने अपने सीने में दर्द महसूस किया और उसे दिल का दौरा पड़ गया । प्रत्यर्थी, मृतक मल्लिकार्जुन की पत्नी है । प्रत्यर्थी ने अपने पति मल्लिकार्जुन की मृत्यु के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए, कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (जिसे संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) के अधीन आयुक्त के समक्ष एक दावा याचिका फाइल की । अपीलार्थी (नियोजक) ने दावा याचिका का विरोध किया । आयुक्त ने तारीख 23 अप्रैल, 2010 के आदेश द्वारा दावा याचिका मंजूर कर लिया और रुपए 3,79,120/- अधिनिर्णीत करते हुए 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम को अपीलार्थी के पास जमा करने का निर्देश दिया जिसमें असफल होने पर, अधिनिर्णीत रकम पर 12%

प्रतिवर्ष की दर से ब्याज भी अधिनिर्णीत किया । नियोजक (इसमें का अपीलार्थी) ने व्यथित महसूस किया और कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर के समक्ष अपील फाइल किया । कर्नाटक उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा अपील खारिज कर दिया जिसके कारण नियोजक ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत से यह अपील फाइल की है । न्यायालय द्वारा अपील भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रश्न, अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज मंजूर करने से संबंधित है और यह भी कि किस तारीख से इसे दावेदार (प्रत्यर्थी) को अधिनिर्णीत किया जाना था । अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज मंजूर करना, अधिनियम की धारा 4क द्वारा शासित है । यह प्रश्न कि कब अधिनियम के अधीन प्रतिकर का संदाय "बकाया" हो जाता है और परिणामत: ऐसा किस समय होता है जब ऐसे रकम का ब्याज, अधिनियम की धारा 4क(3) के अधीन यथा उपबंधित देय हो जाता है, अब अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है और इस न्यायालय के दो विनिश्चयों द्वारा सुस्थिर है । हाल ही में, वर्ष 1975 में इस न्यायालय के चार न्यायाधीशों के न्यायपीठों ने प्रताप नारायण सिंह देव बनाम श्रीनिवास सबाता और एक अन्य वाले मामले में, न्यायमूर्ति सिंघल के माध्यम से यह अभिनिर्धारित किया कि एक नियोजक, नियोजन से और नियोजन के दौरान कारित दुर्घटना में कर्मकार की वैयक्तिक क्षति के लिए यथाशीघ्र प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी हो जाता है । तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया कि यह दुर्घटना की तारीख होती है, न कि दावा के अधिनिर्णय की तारीख होती है जो तात्विक है । अब, इस मामले के तथ्यों पर विचार करते हैं, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि आयुक्त ने अधिनिर्णीत रकम पर 12% वार्षिक ब्याज की दर पर प्रत्यर्थियों को ब्याज अधिनिर्णीत किया था किन्तु इसे आदेश की तारीख से 45 दिन बीतने के पश्चात् से अधिनिर्णीत किया था और वह भी तब जब यदि अपीलार्थी 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा करने में असफल हो जाता । दूसरे शब्दों में, यदि, अपीलार्थी ने आदेश की तारीख से 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा कर देता तब प्रत्यर्थी अधिनिर्णीत रकम पर किसी ब्याज का दावा करने का हकदार नहीं होते किन्तु यदि अपीलार्थी 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा करने

में असफल रहता तब प्रत्यर्थी आदेश की तारीख से 12% वार्षिक ब्याज की दर पर ब्याज का दावा करने का हकदार होता । न्यायालय की राय में, अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज अधिनिर्णीत करने में आयुक्त का पूर्व-उल्लिखित निर्देश, इस न्यायालय द्वारा प्रताप नारायण वाले मामले में, अधिकथित विधि के प्रतिकूल है और अतएव, इसे वैधत: कायम नहीं रखा जा सकता है । पूर्ववर्ती चर्चा के प्रकाश में, यद्यपि, प्रत्यर्थी ने इस निर्देश को उच्च न्यायालय में कोई अपील फाइल करके चुनौती नहीं दी है न ही इस न्यायालय के समक्ष भी कोई अपील फाइल करके चुनौती दी है, फिर भी प्रश्न, शुद्धत: विधि का प्रश्न होने के नाते, प्रत्यर्थी के साथ सारवान् न्याय करने को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय यह न्यायसंगत और समुचित समझता है कि आयुक्त के आदेश को प्रत्यर्थी के पक्ष में उपांतरित किया जाए, जिससे कि उपर्युक्त निर्दिष्ट दोनों विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की पुष्टि हो सके । तद्नुसार और पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, तारीख 23 अप्रैल, 2002 के आयुक्त के आदेश को उस सीमा तक प्रत्यर्थी के पक्ष में उपांतरित किया जाता है जिससे कि अधिनिर्णीत रकम रु. 3,79,120/- पर दुर्घटना की तारीख अर्थात् तारीख 6 अप्रैल, 1999 से 12% वार्षिक ब्याज की दर पर ब्याज दिया जाए । (पैरा 19, 20, 21, 26, 27, 28, 29 और 30)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1976]	(1976) 1 एस. सी. सी. 289 = ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 222 : **प्रताप नारायण सिंह देव** बनाम **श्रीनिवास सबाता और एक अन्य** ।	21, 22, 23, 24, 25, 27

निर्दिष्ट निर्णय

[2012]	(2012) 12 एस. सी. सी. 540 : **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सिबी जार्ज और अन्य** ;	24, 25

[2009] (2009) 6 एस. सी. सी. 280 :
ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लि. बनाम
मोहम्मद नासिर और एक अन्य ; 23, 24, 25

[2007] (2007) 2 एस. सी. सी. 349 :
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लि. बनाम
मुबासिर अहमद और एक अन्य ; 23, 24, 25

[1999] (1999) 8 एस. सी. सी. 254 =
ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 3502 :
केरल राज्य विद्युत बोर्ड और एक अन्य बनाम 22, 23,
वाल्सला के. और एक अन्य । 24, 25

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2009 की सिविल अपील सं. 7470.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री अनिता शिनॉय, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से कोई नहीं

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे ने दिया ।

न्या. सप्रे – यह अपील, कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर, द्वारा 2002 की एम. एफ. ए. सं. 4170 में पारित तारीख 29 नवम्बर, 2006 के अंतिम निर्णय और आदेश के विरुद्ध निदेशित है जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील को खारिज कर दिया था और कर्मकार प्रतिकर आयुक्त (श्रम न्यायालय), बेल्लारी (जिसे इसमें इसके पश्चात् "आयुक्त" कहा गया है) द्वारा पारित तारीख 23 अप्रैल, 2002 के आदेश की पुष्टि कर दिया था ।

2. इस अपील में, अंतर्वलित विवाद्यक संक्षिप्त प्रकृति का है । यह इसमें नीचे उल्लिखित तथ्यों से स्पष्ट होता है ।

3. मल्लिकार्जुन, कर्नाटक राज्य के लिए अपीलार्थी-राज्य सड़क परिवहन निगम का एक कर्मचारी था जो चालक के रूप में कार्य कर रहा था । उसकी मृत्यु उस समय हुई जब वह तारीख 6 अप्रैल, 1999 को ड्यूटी पर था, जब उसने अपने सीने में दर्द महसूस किया और उसे दिल

का दौरा पड़ गया ।

4. प्रत्यर्थी, मृतक मल्लिकार्जुन की पत्नी है । प्रत्यर्थी ने अपने पति मल्लिकार्जुन की मृत्यु के लिए प्रतिकर का दावा करते हुए, कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (जिसे संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) के अधीन आयुक्त के समक्ष एक दावा याचिका फाइल की । अपीलार्थी (नियोजक) ने दावा याचिका का विरोध किया ।

5. आयुक्त ने तारीख 23 अप्रैल, 2010 के आदेश द्वारा दावा याचिका मंजूर कर लिया और रुपए 3,79,120/- अधिनिर्णीत करते हुए 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम को अपीलार्थी के पास जमा करने का निर्देश दिया जिसमें असफल होने पर, अधिनिर्णीत रकम पर 12% प्रतिवर्ष की दर से ब्याज भी अधिनिर्णीत किया ।

6. नियोजक (इसमें का अपीलार्थी) ने व्यथित महसूस किया और कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलोर के समक्ष अपील फाइल किया । कर्नाटक उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा अपील खारिज कर दिया जिसके कारण नियोजक ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत से यह अपील फाइल की है ।

7. इसलिए, प्रश्न, जो इस अपील में विचार के लिए उद्भूत हुआ है, यह है कि क्या उच्च न्यायालय, कर्मचारी की अपील खारिज करने में न्यायानुमत था और तद्वारा आयुक्त के आदेश को कायम रखने में न्यायानुमत था ।

8. दोनों पक्षकारों की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ । इसलिए, हमने मामले के अभिलेखों का परिशीलन किया । अभिलेखों का परिशीलन करने के पश्चात्, हम आयुक्त के तारीख 23 अप्रैल, 2002 के आदेश में अधोलिखित उपदर्शित सीमा तक प्रत्यर्थी के पक्ष में संशोधन करते हैं ।

9. आरंभ में ही, हम इस तथ्य का उल्लेख कर सकते हैं कि यह सुस्थिर सिद्धांत होने के नाते कि जब एक कर्मचारी को नियोजन के अनुक्रम के दौरान शारीरिक क्षति कारित होती है या उसकी मृत्यु होती है और वह/उसका विधिक प्रतिनिधि, अधिनियम के अधीन अपने नियोजक

से प्रतिकर का दावा करते हुए, दावा याचिका फाइल करता है तो ऐसे दावा याचिका का न्यायसंगत विनिश्चय करने के लिए आयुक्त के समक्ष कुछ तात्विक मुद्दे उद्भूत होते हैं जो यह है कि प्रश्न, क्या कर्मचारी को दुर्घटना कारित हुई, क्या दुर्घटना नियोजक के अनुक्रम के दौरान कारित हुई, क्या यह नियोजन के दौरान उद्भूत हुई, कैसे और किस तरीके से दुर्घटना कारित हुई, दुर्घटना कारित होने में किसकी उपेक्षा थी, क्या कर्मचारी और नियोजक के बीच कोई संबंध अस्तित्व में था, कर्मचारी की क्या आयु थी और उसकी मासिक वेतन क्या थी, मृतक कर्मचारी के कितने आश्रित हैं, दुर्घटना में कारित क्षतियों के कारण कर्मचारी को किस सीमा तक नि:शक्तता कारित हुई, क्या नियोजक द्वारा दुर्घटना इत्यादि के लिए कोई बीमा कराई गई थी ।

10. पूर्वोक्त उल्लिखित प्रश्न, आवश्यक रूप से तथ्य के प्रश्न हैं और इसलिए, उन्हें साक्ष्य की सहायता से साबित करना अपेक्षित होता है । जब एक बार वे अन्यथा तरीके से साबित कर दिए जाते हैं तो उन पर अभिलिखित निष्कर्ष तथ्य के निष्कर्ष के रूप में माने जाते हैं ।

11. अधिनियम की धारा 30 के अधीन आयुक्त के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष उपबंधित अपील मात्र अधिनियम की धारा 30 के खंड (क) से (ङ) के साथ उक्त धारा के प्रथम परंतुक में अंतर्विष्ट संशोधन के अधीन उस विनिर्दिष्ट आदेश के विरुद्ध ही की जा सकती है जिस अपील में विधि के सारवान् प्रश्न अंतर्वलित हो ।

12. दूसरे शब्दों में, अधिनियम की धारा 30 के अधीन आयुक्त के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष उपबंधित अपील, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन नियमित प्रथम अपील के समान नहीं है जिसमें दोनों तथ्य और विधि के प्रश्नों पर सुना जा सकता है । उच्च न्यायालय की अपील विनिश्चय करने की अपीली अधिकारिता मामले में उद्भूत होने वाले विधि के सारवान् प्रश्नों की मात्र परीक्षा तक ही सीमित है ।

13. जब एक नियोजक अपील फाइल करता है तो वह उच्च न्यायालय में अपील फाइल करने की पूर्व शर्त के रूप में, सिवाय जहां अपील खंड (ख) में आने वाले आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है,

अधिनियम की धारा 30 के द्वितीय परंतुक के निबंधनों में संपूर्ण अधिनिर्णीत रकम जमा करने की विधिक बाध्यता के अधीन होता है ।

14. यह मात्र तभी होता है जब नियोजक, आयुक्त द्वारा सम्यक् रूप से प्रमाणित अपील ज्ञापन के साथ संपूर्ण अधिनिर्णीत रकम जमा करता है, तो उसकी अपील को अधिनियम की धारा 30 की अपेक्षाओं को पूरा करते हुए, समुचित रूप से फाइल अपील माना जाता है ।

15. उसके बाद, ऐसी अपील स्वीकृति के प्रश्न पर सुनी जाती है, यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि क्या इसमें विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है या नहीं । क्या अपील में, विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है और इसकी उच्च न्यायालय द्वारा परीक्षा की जानी आवश्यक है । यदि, विधि का सारवान् प्रश्न उद्भूत होता है तो उच्च न्यायालय गुणागुणों पर अंतिम सुनवाई करने के लिए अपील को स्वीकार कर लेता है अन्यथा, आरंभ में ही खारिज कर देता है इस कारण के साथ कि इसमें विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित नहीं हैं ।

16. अब, इस मामले के तथ्यों पर आते हैं, हमारा यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में उपर्युक्त उल्लिखित तात्विक प्रश्नों पर विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित नहीं था । दूसरे शब्दों में, हमारे मत में, आयुक्त ने पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर समुचित तौर पर मामले में उद्भूत होने वाले सभी तात्विक प्रश्नों पर विनिश्चय किया है और प्रत्यर्थी को देय प्रतिकर को सही ही अवधारित किया है । इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा तथ्यों के आधार पर सही ही पुष्टि की गई है ।

17. मामले के इस मत को ध्यान में रखते हुए, निष्कर्ष, जो दोनों निचले न्यायालयों के तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष होने के नाते इस न्यायालय पर बाध्यकारी है । अन्यथा भी, हम तथ्यात्मक निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने के लिए कोई अच्छा आधार नहीं पाते हैं । तथ्यात्मक निष्कर्षों में से कोई भी न तो अनुचित या मनमाना पाया गया है या साक्ष्यों पर आधारित नहीं है या विधि के किसी उपबंधों के विरुद्ध है । तद्नुसार, हम इन निष्कर्षों को कायम रखते हैं ।

18. इसे ध्यान में रखते हुए, हम अगले प्रश्न की परीक्षा करते हैं जिसे आयुक्त द्वारा गलत तौर पर निश्चित किया गया है और उच्च न्यायालय ने भी आयुक्त द्वारा कारित त्रुटि को नोटिस नहीं किया है ।

19. प्रश्न, अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज मंजूर करने से संबंधित है और यह भी कि किस तारीख से इसे दावेदार (प्रत्यर्थी) को अधिनिर्णीत किया जाना था ।

20. अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज मंजूर करना, अधिनियम की धारा 4क द्वारा शासित है । यह प्रश्न कि कब अधिनियम के अधीन प्रतिकर का संदाय "बकाया" हो जाता है और परिणामत: ऐसा किस समय होता है जब ऐसे रकम का ब्याज, अधिनियम की धारा 4क(3) के अधीन यथा उपबंधित देय हो जाता है, अब अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है और इस न्यायालय के दो विनिश्चयों द्वारा सुस्थिर है ।

21. हाल ही में, वर्ष 1975 में इस न्यायालय के चार न्यायाधीशों के न्यायपीठों ने **प्रताप नारायण सिंह देव** बनाम **श्रीनिवास सबाता और एक अन्य**[1] वाले मामले में न्यायमूर्ति सिंघल के माध्यम से यह अभिनिर्धारित किया कि एक नियोजक, नियोजन से और नियोजन के दौरान कारित दुर्घटना में कर्मकार की वैयक्तिक क्षति के लिए यथाशीघ्र प्रतिकर संदाय करने के लिए दायी हो जाता है । तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया कि यह दुर्घटना की तारीख होती है, न कि दावा के अधिनिर्णय की तारीख होती है जो तात्विक है ।

22. **केरल राज्य विद्युत बोर्ड और एक अन्य** बनाम **वाल्सला के. और एक अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों के न्यायपीठ के समक्ष मुख्य प्रश्न के सदृश्य एक अन्य प्रश्न यह भी उद्भूत हुआ था कि क्या अधिनियम 30/1995 के संविधि संशोधन जो तारीख 15 सितम्बर, 1995 को प्रभावी हुआ था, द्वारा प्रतिकर की रकम में वृद्धि और ब्याज की दर में वृद्धि, उन मामलों में लागू होगी जिसमें तारीख 15 सितम्बर, 1995 के पूर्व दुर्घटना घटित हुई थी । माननीय

---

[1] (1976) 1 एस. सी. सी. 289 = ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 222.

[2] (1999) 8 एस. सी. सी. 254 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 3502.

न्यायाधीशों ने **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि प्रतिकर की दर का अवधारण करने के लिए सुसंगत तारीख, दुर्घटना की तारीख होती है न कि आयुक्त द्वारा दावे के अधिनिर्णय की तारीख होती है और इसलिए, यदि दुर्घटना तारीख 15 सितम्बर, 1995 के पूर्व हुई है तो दुर्घटना की तारीख पर लागू दर ही प्रभावी होगी ।

23. इन दो विनिश्चयों के पश्चात्, इस न्यायालय ने दो अन्य मामलों में अर्थात् **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **मुबासिर अहमद और एक अन्य**[1] तथा **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **मोहम्मद नासिर और एक अन्य**[2] वाले मामलों में दो न्यायाधीशों के न्यायपीठों द्वारा **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) और **वाल्सला** (उपर्युक्त) वाले मामलों में अधिकथित विधि को नोटिस किए बिना विपरीत मत अपनाया और यह अभिनिर्धारित किया कि आयुक्त का आदेश पारित हो जाने के पश्चात् ही प्रतिकर का संदाय बकाया होता है या उस तारीख के संदर्भ में जिस तारीख को दावा आवेदन फाइल किया गया है ।

24. प्रश्न पर विनिश्चयों में विरोधाभास, इस न्यायालय (दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ) द्वारा **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सिबी जार्ज और अन्य**[3] वाले मामले में नोटिस किया गया था । न्यायपीठ की ओर से न्यायमूर्ति आफ़ताब आलम ने पूर्व-उल्लिखित विनिश्चयों को निर्दिष्ट करते हुए और प्रत्येक विनिश्चय के निर्णय-सार को स्पष्टीकृत करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि **मुबासिर** (उपर्युक्त) और **मोहम्मद नासिर** (उपर्युक्त) वाले मामलों में दिए गए दो बाद के विनिश्चयों, जिनमें इस न्यायालय के वृहत्तर न्यायपीठों (क्रमश: चार और तीन न्यायाधीशों द्वारा गठित) द्वारा **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) और **वाल्सला** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिए गए पूर्ववर्ती दोनों विनिश्चयों को नोटिस किए बिना प्रतिकूल मत अपनाया गया था और अतएव, **मुबासिर** (उपर्युक्त) और **मोहम्मद नासिर** (उपर्युक्त) वाले मामले

---

[1] (2007) 2 एस. सी. सी. 349.

[2] (2009) 6 एस. सी. सी. 280.

[3] (2012) 12 एस. सी. सी. 540.

में बाद में दिए गए विनिश्चयों को प्रश्न पर सही विधि के सिद्धांत को अधिकथित किया जाना अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है और इसलिए, न ही इसे प्रश्न पर बाध्यकारी पूर्व-निर्णय के रूप में माना जा सकता है ।

25. दूसरे शब्दों में, **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) और **वाल्सला** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि को इस विषय पर सही विधि के सिद्धांत के रूप में सभी प्रकार से अधिकथित अभिनिर्धारित किया गया है । तद्नुसार, **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लि.** बनाम **सिबी जार्ज और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, दो न्यायाधीशों के न्यायपीठों ने **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) और **वाल्सला** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित विधि के सिद्धांतों का अनुसरण किया और मामले को **मुबासिर** (उपर्युक्त) और **मोहम्मद नासिर** (उपर्युक्त) में अधिकथित विधि का अनुसरण किए बिना विनिश्चित किया जिसे अनवधानता के कारण अभिनिर्धारित किया गया था ।

26. अब, इस मामले के तथ्यों पर विचार करते हैं, हमारा यह निष्कर्ष है कि आयुक्त ने अधिनिर्णीत रकम पर 12% वार्षिक ब्याज की दर पर प्रत्यर्थियों को ब्याज अधिनिर्णीत किया था किन्तु इसे आदेश की तारीख से 45 दिन बीतने के पश्चात् से अधिनिर्णीत किया था और वह भी तब जब यदि अपीलार्थी 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा करने में असफल हो जाता ।

27. दूसरे शब्दों में, यदि, अपीलार्थी ने आदेश की तारीख से 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा कर देता तब प्रत्यर्थी अधिनिर्णीत रकम पर किसी ब्याज का दावा करने का हकदार नहीं होता किन्तु यदि अपीलार्थी 45 दिनों के भीतर अधिनिर्णीत रकम जमा करने में असफल रहता है तब प्रत्यर्थी आदेश की तारीख से 12% वार्षिक ब्याज की दर पर ब्याज का दावा करने का हकदार होता ।

28. हमारी राय में, अधिनिर्णीत रकम पर ब्याज अधिनिर्णीत करने में आयुक्त का पूर्व-उल्लिखित निर्देश, इस न्यायालय द्वारा **प्रताप नारायण** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि के प्रतिकूल है और अतएव, इसे वैधत: कायम नहीं रखा जा सकता है ।

29. पूर्ववर्ती चर्चा के प्रकाश में, यद्यपि, प्रत्यर्थी ने इस निर्देश को उच्च न्यायालय में कोई अपील फाइल करके चुनौती नहीं दी है न ही इस न्यायालय के समक्ष भी कोई अपील फाइल करके चुनौती दी है, फिर भी प्रश्न, शुद्धत: विधि का प्रश्न होने के नाते, प्रत्यर्थी के साथ सारवान् न्याय करने को ध्यान में रखते हुए, हम यह न्यायसंगत और समुचित समझते हैं कि आयुक्त के आदेश को प्रत्यर्थी के पक्ष में उपांतरित किया जाए, जिससे कि उपर्युक्त निर्दिष्ट दोनों विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की पुष्टि हो सके ।

30. तद्नुसार और पूर्ववर्ती चर्चा को ध्यान में रखते हुए, तारीख 23 अप्रैल, 2002 के आयुक्त के आदेश को उस सीमा तक प्रत्यर्थी के पक्ष में उपांतरित किया जाता है जिससे कि अधिनिर्णीत रकम रुपए 3,79,120/- पर दुर्घटना की तारीख अर्थात् तारीख 6 अप्रैल, 1999 से 12% वार्षिक ब्याज की दर पर ब्याज दिया जाए ।

31. तद्नुसार, आयुक्त को यह निर्देश दिया जाता है कि वह इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के निबंधनों में अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को देय संपूर्ण रकम का निर्धारण करे ।

32. चूंकि, इस मामले में, अपीलार्थी के साथ ही प्रत्यर्थी की ओर से कोई उपस्थित नहीं हुआ है, इसलिए, रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि वह एक सप्ताह के भीतर इस आदेश की प्रतिलिपि को क्रमश:, आयुक्त, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के पास भेजेगा ।

33. आयुक्त आदेश की प्रति प्राप्त होने पर पक्षकारों को नोटिस जारी करेगा और सम्यक् सत्यापन करने के पश्चात् प्रत्यर्थी को देय संपूर्ण रकम की गणना करेगा जिससे कि अपीलार्थी उस रकम को एक माह के भीतर जमा करने के लिए समर्थ हो सके ।

34. तद्नुसार, अपील, पूर्व-उल्लिखित निर्देशों और आयुक्त द्वारा मामला सं. केएबी/केएनपी/7/985/99 में पारित तारीख 23 अप्रैल, 2002 के आदेश में उपांतरणों के साथ निपटाई जाती है ।

अपील भागत: मंजूर करते हुए ।

क.